निराला के काव्य में पर्यावरण चेतना

प्रो. वंदना पाण्डेय
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज,
मुरादाबाद (उ0प्र0)

06

सारांश

यह शोध आलेख हिन्दी के प्रमुख छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति अभिव्यक्त चेतना का विश्लेषण करता है। उनकी काव्याभिव्यक्ति में प्रकृति सौंदर्य का माध्यम नहीं, अपितु जीवंत व संवेदनशील अस्तित्व है, जो आज के पर्यावरणीय संकटों के संदर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक प्रतीत होती है।

प्रस्तावना

पर्यावरण संकट आज के समय की सबसे गंभीर समस्याओं में से एक है। इस संदर्भ में साहित्य का दायित्व केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि जागरूकता और चेतना का विस्तार करना भी है। निराला का काव्य इसी चेतना का प्रतिनिधि बनकर सामने आता है, जिसमें प्रकृति की करुण पुकार, सह–अस्तित्व की भावना और मानवीय हस्तक्षेप के परिणामों का चित्रण मिलता है।

निराला की कविताओं में प्रकृति को मानवीय भावनाओं से युक्त किया गया है। उनकी प्रसिद्ध कविता 'विहगों का स्वागत' (संग्रहः अनामिका, पृ0 34) में पक्षियों के आगमन को एक उत्सव की तरह दर्शाया गया है :

''नभ में घन से गूँज रही
तानें नव उल्लास भरीं,
पंखों में ले उड़ी पवन
सुवास पुलकित गात धरीं।''

यह वर्णन केवल दृश्य नहीं, प्रकृति और मनुष्य के एकाकार होने की अनुभूति है। निराला के लिए प्रकृति जड़ नहीं है। उन्होंने इसमें सजीवता के दर्शन कर मानवीय भावनाओं का आरोप किया है। तथा साथ ही जीवन के साथ उसका तादात्म्य भी स्थापित किया है। इसी कारण उनको प्रकृति कभी रोती हुई प्रतीत होती है, कभी हँसती हुई, कभी प्रेमी–प्रेमिका की भांति चेष्टा करती हुई प्रतीत होती है। बंगाल की स्वछंद प्रकृति ने निराला प्रकृति संबंधी दृष्टिकोण को उन्मुक्तता प्रदान की है। उनका बादलों के प्रति विशेष अनुराग है तथा यह अनुराग 'बादल–राग' कविता में भली–भाँति रूप से दृष्टिगोचर होता है। निराला के प्रकृति चित्रण में बादल प्रमुख विषय फूल है। फूलों पर आधारित उनकी कविता 'जूही की कली' एक प्रभावोत्पादक रचना है। जिसमें जूही की कली को एक नायक और मलयानित को एक नायक के रूप में चित्रित किया गया है।

कविता 'कुकुरमुत्ता' में एक साधारण वनस्पति के माध्यम से जीवन के प्रति तिरस्कार और व्यंग्य के साथ–साथ प्राकृतिक उपेक्षा को दर्शाया गया है। 'कुकुरमुत्ता' जैसे प्रतीकों में वे उस अनदेखे प्राकृतिक संसार की बात करते हैं जिसे आधुनिकता ने तिरस्कृत कर दिया।

कविता 'तुलसी' में तुलसी को धार्मिक प्रतीक से अधिक एक जैविक चेतना के रूप में चित्रित किया गया है। तुलसी निराला के लिए प्रकृति के संरक्षण और श्रद्धा की प्रतीक है :

''सजल नयन की पीड़ा बन,
घर–घर में बसी तुलसी।''

'सरोज–स्मृति' में गंगा के तट पर बैठकर कवि अपनी बेटी की स्मृति में विलीन हैं। इस कविता में नदी केवल भूगोल नहीं, एक गवाह और साक्षी है, जो मानव जीवन के गहरे दुख और उल्लाख दोनों की संगिनी बनती है।

वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकताः

आज जब मानव सभ्यता जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, प्रदूषण और जैव विविधता के क्षरण जैसे संकटों का सामना कर रही है, निराला की कविताएँ न केवल कलात्मक प्रेरणा देती हैं, बल्कि एक नैतिक और दार्शनिक दृष्टिकोण भी प्रदान करती हैं। उनका काव्य हमें प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने का संदेश देता है।

कवि निराला ने 'संध्या – सुंदरी' नामक कविता में भी प्रकृति के नवीन रूप का वर्णन किया है। सांयकाल में मेघमय आसमान से संध्या सुंदरी धीरे धीरे उतर रही है, जिसके अंचल में चंचलता का तनिक भी आभास नहीं है। उदाहरण द्रष्टव्य है –

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है
संध्या–सुंदरी परी सी
धीरे धीरे धीरे

साथ ही उन्होंने प्रकृति के कोमल तथा कठोर दोनों रूपों का चित्रण किया है। उपर्युक्त समस्त उदाहरण प्रकृति के कोमल रूप के व्यंजक हैं। उनके परवर्ती काव्य में इसका उद्दात और पुरूष रूप प्रधान है। 'तरंग', 'बादल', 'वनबेला' आदि रचनाएँ इसी कोटि की हैं। उनका बादल तो मानो क्रांति का ही प्रतीक है –

गरजो, हे मंद्र व्रज स्वर,
थर्राये भूधर–भूधर।
झर–झर – झर–झर धारा झर,
पल्लव–पल्लव पर जीवन।

निष्कर्ष

निराला की कविताएँ केवल छायावादी कल्पना नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति एक गहन दायित्व बोध की अभिव्यक्ति हैं। उनकी रचनाओं में जो पर्यावरणीय चेतना है, वह आज के संकटमय युग में अत्यन्त प्रेरणादायक और मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती हैं ।

संदर्भः–

1. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी। 'अनामिका', राजकमल प्रकाशन, 2014 ।
2. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी। 'कुकुरमुत्ता', लोकभारती प्रकाशन, 2016 ।
3. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी। 'प्रभा', हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 2009 ।
4. शर्मा, रमेशचंद्र। 'निराला का प्रकृति बोध', साहित्य भवन, पृ0 सं0–67–84 ।
5. मिश्र, रमाकांत। 'हिन्दी कविता में पारिस्थितिकी बोध', वाणी प्रकाशन, 2020 ।
6. शुक्ल, रामचंद्र। 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', नागरी प्रचारिणी सभा, पृ0 सं0–391–397।